■ उत्तरांचल की पर्यटन परियोजनाओं पर सवालिया निशान

प्रकृति की गोद में भविष्य का सपना

पहाड़ों के बीच बसे छोटे छोटे गाँवों में स्थानीय संसाधनों के साथ भविष्य संवारने की पहल कैसे की जा सकती है- यह सिक्किम के एक छोटे से गाँव 'पास्टेंगा' से सीखा जा सकता है। बड़ी-बड़ी सरकारी घोषणाओं की बजाय 'ईकोटूरिज्म' व 'विलेजटूरिज्म' को प्रोत्साहित कर उत्तरांचल में भी ऐसी ही पहल की जा सकती है, जिसके लिए निकम्मी सरकारों का भरोसा छोड़कर गाँव के लोगों को अकर्मण्यता छोड़नी होगी। आखिर सवाल अपने ही भविष्य का है।

किसी पहाड़ी राज्य में घूमने आये पर्यटक यही अपेक्षा लेकर आते हैं कि वे नदियों, झीलों, तालाबों, झरनों, फूलों और हरे-भरे पेड़ों के मनोहारी स्थलों में शान्तिपूर्ण कुछ लमहे बिताएं। पर्यटक कभी नहीं चाहेंगे कि उन्हें यहां भी वही कंकरीट का जंगल मिले जिनसे वे शहरों से उकताकर कुछ समय के लिए यहां आये हैं। किसी पांच सितारा होटल की कोन्टिनेंटल डिश के बजाए पहाड़ का कोई परम्परागत व्यंजन जैसे- भट की चुटकाणी, गडेरी की सब्जी, झोई-भात, नाक में लगने वाला रायता आदि उनके जायके को बढ़ायेगा क्योंकि ये पहाड़ी भोजन उनके रोज के खाने से कुछ हटकर होगा। डीजे के शोर से अलग मसकबीन या ढोलक की ताल पर गाये गये पहाड़ी फाग में झूमना उन्हें ज्यादा रास आयेगा। ये सारी चीजें हैं जो किसी पर्यटक के सफर को यादगार बना सकती हैं बशर्ते कि इन्हें तरीके से प्रस्तुत किया जाए। असल में इस तरह का पर्यटन 'ईकोटूरिज्म' की श्रेणी में आता है और कुछ इसी तरह से पूर्वोत्तर के राज्य सिक्किम में भी 'ईकोटूरिज्म' को बढ़ावा दिया जा रहा है। ईकोटूरिज्म के मायने भी यही हैं कि प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान पहुँचाए बिना पर्यटक प्रकृति में घूमने का आनन्द लें। सिक्किम जैसे छोटे राज्य में ईकोटूरिज्म के महत्व को समझते हुए राज्य सरकार के साथ छोटे-छोटे एनजीओ भी कई गाँवों में सक्रिय हैं, लेकिन उत्तरांचल में पर्यटन के विकास के नाम पर संवेदनशील पहाड़ों में बड़े-बड़े होटलों के निर्माण, अव्यवस्थित यातायात की भीड़, वाहनों के शोर और दिनों दिन बढ़ते बाजारीकरण से पर्यटन की संभावनाएं गुड़गोबर हो रही हैं। लेकिन ये बात हमें अभी समझ नहीं आ रही क्योंकि प्रकृति की गोद में होने के बावजूद हम ईकोटूरिज्म के महत्व को नहीं समझ पा रहे हैं।

छोटे से गाँव में बिना ज्यादा संसाधन जुटाए भी 'ईकोटूरिज्म' को कैसे विकसित किया जाए इसे सिक्किम की राजधानी गंगतोक से घंटे भर की सड़क यात्रा की दूरी पर बसे गाँव पास्टेंगा से बेहतर सीखा जा सकता है। पास्टेंगा में लोग अपनी सदियों पुरानी संस्कृति, परम्परा और जीवनशैली को पर्यटकों के लिए जीवित रखे हुए हैं, हालांकि इस सब पर उनकी व्यक्तिगत आस्था भी है। नेपाली संस्कृति से पूरी तरह प्रभावित इस गाँव में छोटे-छोटे झरने, जलधाराएं, वनस्पतियों और दुर्लभ जीव-जन्तु हैं जो अक्सर किसी पहाड़ी गाँव में देखे जा सकते हैं। लेकिन पास्टेंगा में इस जैव-विविधता के बचाए रखने के लिए बच्चा-बच्चा जागरुक है क्योंकि उन्हें बता दिया गया है कि भविष्य में यही उनकी रोजी-रोटी है। गाँव में 150 साल से ज्यादा पुराने मकानों के साथ हर घर में पर्यटकों के रहने के लिए अलग कमरे बने हैं। पास्टेंगा

आवास के साथ पर्यटकों के लिए बना होमस्टे

में 10 से ज्यादा होमस्टे हैं जिनकी बनावट बिल्कुल एक सी है। टिन शेड वाले ये एक ही आकार के घर बड़े सुन्दर दिखाई देते हैं। होमस्टे में पर्यटकों के रहने की अच्छी व्यवस्था की गई है। पर्यटकों को यहां रखने का उद्देश्य उन्हें परिवार में रहने जैसा माहौल देना है। यहां तक कि पर्यटकों को खाना भी पारम्परिक रसोई में घर के सदस्यों के साथ परोसा जाता है। लेकिन सारी चीजें बड़े सलीके और सफाई से की गई हैं। पर्यटक को कहीं किसी कमी का अहसास नहीं होने दिया जाता। हर घर की मुख्य महिला सदस्य को होमस्टे ऑपरेटर की भूमिका निभानी होती है और ध्यान रखना होता है कि पर्यटक कोई असहजता महसूस ना करे। प्रत्येक होमस्टे के पास सुन्दर फूलों और हर्बल वनस्पतियों के बगीचे बनाए गए हैं। कुल मिलाकर होमस्टे का यह कॉन्सेप्ट नायाब होने के साथ ही 'टूरिस्ट फ्रेन्डली' भी है।

अपनी सांस्कृतिक विरासत को भी पास्टेंगा के लोग पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए प्रयोग कर रहे हैं। गीत-संगीत, नृत्य और इनके साथ पारम्परिक वाद्ययंत्रों की ताल। गाँव में एक सांस्कृतिक दल है जिसमें नई पीढ़ी से लेकर बुजुर्गों तक का सक्रिय योगदान है। दल की अपनी पारम्परिक पोशाक भी है। ऐसे रंगारंग माहौल में कोई भी झूमे-नाचे बिना नहीं रह पाता। पर्यटकों को गाँव में घुमाने और ऊँचे चट्टानी रास्तों पर ट्रैकिंग कराने की व्यवस्था भी गाँव के लोगों ने की है। इसके लिए कुछ गाइड और पोर्टर नियुक्त किए गये हैं। गाँव के लड़के-लड़कियां ही इस भूमिका को निभा रहे हैं।

उत्तरांचल ना ही प्राकृतिक सुन्दरता के

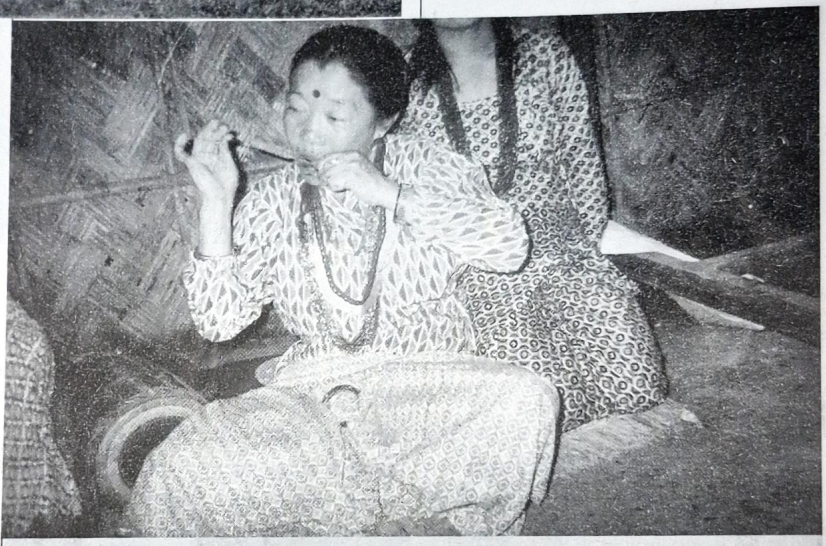

अपनी पारम्परिक पोशाक में स्थानीय वाद्ययंत्र बजाती सिक्किम की महिला

मामले में सिक्किम से पीछे है, ना ही जैवविविधता और संस्कृति के मामले में। 16,826 गाँवों वाले इस राज्य में अगर ईकोटूरिज्म के प्रति सिक्किम के गाँवों जैसी जागरुकता आ जाए तो सिफर से शिखर तक पहुँचना कोई कठिन काम नहीं है।

सिक्किम सरकार भी पर्यटन के विकास के लिए संवेदनशील है। गाँव को 'मॉडल विलेज' बनाने के लिए राज्य सरकार की ओर से घरों का एक नक्शा तय किया गया है। गरीब परिवारों को इन घरों के लिए पैसा भी दिया गया है।

ग्रामीणों को ईकोटूरिज्म की जानकारी देने के लिए समय-समय पर कैंप लगाये जाते हैं, इनमें पर्यटकों के कमरों को सजाने से लेकर उनसे बातचीत करने तक का व्यवहारपरक प्रशिक्षण निःशुल्क दिया जाता है। इस तरह के प्रशिक्षणों से पर्यटन के प्रति ग्रामीणों की जागरुकता बढ़ने के साथ ही उनका व्यक्तित्व भी निखर रहा है। राज्य के पर्यटन विभाग की ओर से इन गाँवों पर आधारित पोस्टर और ब्रॉशर्स भी प्रकाशित किए जा रहे हैं जिनमें पर्यटकों के लिए पर्याप्त जानकारी है।

उत्तरांचल सरकार का पूरा ध्यान आईटी, बायोटैक, बीपीओ या फिर बड़ी-बड़ी कम्पनियों को रिझाने में लगा है। वर्तमान में 26 से ज्यादा बीपीओ उत्तरांचल में हैं। आईटी माइक्रोसोफ्ट अकादमी, शिखर प्रोजेक्ट, इन्टैलटैक्नॉलॉजी इंडिया जैसी कम्पनियों से सरकार का मौखिक करार भी लम्बे समय से हो चुका है। मल्टीप्लेक्स प्रोजेक्टों को पहले तीन साल तक मनोरंजन कर में नौ प्रतिशत तक छूट दे दी गई है। लेकिन इस पूरी मुहिम से फायदा एक सीमित वर्ग को होगा। ईमानदारी से देखा जाए तो यह वर्ग या तो शहरी होगा या गाँवों से पलायन कर चुका पढ़ा-लिखा युवा वर्ग। गाँवों की स्थिति पर इस मुहिम का खास असर होगा, ऐसा नहीं लगता। अगर सरकार 'ईकोटूरिज्म' की ओर भी अपना ध्यान आकर्षित करे और सिक्किम की तर्ज पर गाँवों को प्रोत्साहन दिया जाए तो लाखों ग्रामीणों को भी रोजगार मिल सकेगा। सरकार इस दिशा में जब जागे सिक्किम के ग्रामीणों की तरह गैरसरकारी तौर पर भी पहल की जा सकती है। आखिर सवाल अपने ही भविष्य का है।

उमेश पन्त, जामिया मिलिया, दिल्ली